एक ‘रानी’ के ‘देवी’ हो जाने की महागाथा

पीयूष कुमार दूबे

यह सर्वविदित तथ्य है कि गत एक हज़ार वर्षों का कालखंड भारतीय समाज और संस्कृति के लिए अपने अस्तित्व और अस्मिता के रक्षार्थ किए गए भीषण संघर्षों का कालखंड रहा है। पहले मुसलमानों और फिर अँग्रेज़ों के शासन में भारतभूमि के विभिन्न भाग, विभिन्न कालों में, पराधीनता का दंश झेलने के लिए विवश रहे हैं। परंतु यही वो दौर भी था जब इस वीर-प्रसूता भूमि पर एक से एक महान विभूतियाँ स्वाभिमान से उन्नत मस्तक के साथ मातृभूमि की स्वाधीनता के लिए संघर्षरत रहीं। स्वाधीनता की इन्हीं विभूतियों में एक नाम गोंड राज्य की महान वीरांगना महारानी दुर्गावती का है, जिन्होंने मातृभूमि की स्वाधीनता के लिए न केवल अपनी शक्ति से बढ़कर पराक्रम दिखाया अपितु अंत समय में शत्रु की शरण में अपमानजनक जीवन जीने के बजाय स्वयं ही मृत्यु को अंगीकार कर लिया।

ध्यान दें तो इतिहास ने रानी दुर्गावती को इस रूप में याद रखा है कि वे एक गोंड रानी थीं, जिन्होंने अपने राज्य की रक्षा के लिए अकबर की सेना से युद्ध किया और अंत में पराजित होकर अपने प्राण दे दिए। परंतु यह कथा इतिहास के इस वर्णन जैसी सपाट नहीं है, अपितु ये तो मातृभूमि की वेदी पर बलिदान देकर अपने लोगों के लिए ‘रानी’ से ‘देवी’1 हो जाने वाली एक वीरांगना की महागाथा है।

जीवन-वृत्त

5 अक्टूबर, 1524 की तारीख इतिहास में दर्ज है, जब खजुराहो के भव्य मंदिरों का निर्माण करने वाले महान चंदेल राजवंश में महोवा के चंदेल राजा कीर्ति सिंह चंदेल अथवा राजा शालिवाहन के यहाँ एक कन्या का जन्म हुआ।2 कहते हैं कि इस तारीख को दुर्गाष्टमी थी, जिस कारण कन्या का नाम ‘दुर्गावती’ रखा गया। यह नाम रखते समय शायद ही किसी को अनुमान रहा होगा कि कालांतर में वह कन्या अपनी संज्ञा को सार्थक करते हुए देवी दुर्गा की तरह ही, दुष्टों का दलन कर, शौर्य और पराक्रम की अमिट कहानी लिखने वाली है।

रानी दुर्गावती जितनी शौर्यवान थीं, उतनी ही रूपवान भी। अट्ठारह वर्ष की अवस्था में दुर्गावती के रूप-वैभव की चर्चा के कारण उनके स्वयंवर की तैयारी की जाने लगी थी, जिसमें वे भिन्न-भिन्न प्रदेश के आमंत्रित राजाओं में से अपनी इच्छानुसार पति का वरण कर सकती थीं। दुर्गावती को गोंड राज्य गढ़ कटंगा के राजकुमार दलपतशाह से प्रेम था। दुर्गावती और दलपतशाह के बीच प्रेम किस प्रकार हुआ, इस पर उस क्षेत्र के लोकगीतों में बहुत कुछ जानकारी मिल जाती है। नंदिनी सेनगुप्ता ने अपनी पुस्तक में ऐसे ही एक गोंड लोकगीत का उल्लेख

किया है–

“गढ़ मंडल के दलपति राजा, प्रेमे पियारी लगाई।

बड़े प्रतापी राजा थे, वे दुर्गा से शादी रचाई।"3

इतिहास में उल्लेख मिलता है कि दलपतशाह के पिता संग्रामशाह ने इस संबंध को स्वीकृति दे दी थी, किंतु दुर्गावती के पिता को यह संबंध जोड़ना स्वीकार नहीं हो रहा था। भारत में अँग्रेज़ प्रशासक के रूप में रहे सर विलियम हेनरी स्लीमैन ने इस प्रसंग पर 1837 में 'Journal of The Asiatic Society of Bengal' में प्रकाशित अपने लेख 'History of the Garha Mandala Rajas' में लिखा है, "Overtures had been made for a union between Dulput Sa (Dalpati Shah) and Durghoutee (Durgawati) [the daughter of the raja of Mahoba] who was much celebrated for her singular beauty (but the proposal was rejected on the ground of a previous engagement) and some inferiority of caste on the part of the Garha family.''4

दिलचस्प तथ्य यह है कि इतिहास की स्मृतियों में प्रायः रानी दुर्गावती के वीर-पक्ष का ही वर्णन मिलता है, लेकिन लोक के स्वरों में उनका स्मरण वीरता और प्रेम दोनों के लिए किया गया है। साहित्यिक स्रोतों और लोक-मान्यताओं के अनुसार, दुर्गावती ने दलपतशाह को यह संदेश भिजवाया कि उनके पिता इस संबंध को स्वीकृति नहीं देंगे, अतः दलपतशाह आकर उनका हरण कर लें। जिसके बाद वे सेना सहित महोबा पर आक्रमण करने पहुँच गए।5 एक उल्लेख यह भी मिलता है कि दलपती शाह ने किसी ब्राण के मुख से यह सूचना पाई कि दुर्गावती उनसे प्रेम करती हैं। इसके पश्चात् वे पिता से अनुमति लेकर, अपने कुछ विश्वस्त योद्धाओं के साथ स्वयंवर में पहुँच गए और सभी उपस्थित राजाओं को परास्त कर दुर्गावती से विवाह कर लिया।6

इन भिन्न-भिन्न तथ्यों और लोक-मान्यताओं के मध्य यदि रानी दुर्गावती के व्यक्तित्व के आधार पर घटनाक्रम का अनुमान करने का प्रयत्न करें तो उनके जैसी रूपसंपन्न वीरांगना के लिए न तो प्रेम करना कठिन लगता है, न ही अपने प्रेम की प्राप्ति में बाधक जातीय संकीर्णता के विरुद्ध संघर्ष का मार्ग चुनना ही अतिरंजित प्रतीत होता है। यह रानी दुर्गावती के चरित्र के अनुरूप ही है कि उन्होंने पिता की संकीर्ण सोच को धता बताते हुए दलपतशाह को अपने हरण का आमंत्रण भेजा और विजयी राजकुमार के साथ रानी बनकर सिंगोरगढ़ पहुँचीं। यद्यपि मध्यकालीन भारत में ऐसी सजग और सशक्त स्त्री-चेतना का प्रदर्शन एक विरल घटना ही कही जाएगी। और हो भी क्यों न, आखिर महारानी दुर्गावती जैसी वीरांगनाएँ भी तो विरले ही होती हैं।

गढ़ कटंगा की रानी गढ़ कटंगा की राजधानी सिंगोरगढ़ पहुँचने पर दलपतशाह और दुर्गावती का भव्य स्वागत हुआ। दलपतशाह घोर पराक्रम का परिचय देकर अपने लिए रूप एवं गुण में समान पत्नी लेकर आए थे। विवाह के पश्चात् रानी दुर्गावती की पहली सार्वजनिक उपस्थिति तब हुई जब वे अपने ससुर संग्रामशाह के पाँव छूने पहुँची। इस अवसर पर संग्रामशाह ने अपनी पुत्रवधू को एक बड़ा भू-भाग आशीर्वाद स्वरूप प्रदान किया। इस भूमि के बड़े हिस्से का उपयोग रानी ने एक झील के निर्माण हेतु किया, जिसे आज भी जबलपुर में 'रानीताल' के नाम से जाना जाता है।

1541-42 के लगभग रानी विवाहित होकर सिंगोरगढ़ आईं और इसके बाद अगले आठ-नौ वर्ष उन्होंने सुखपूर्वक पति दलपतशाह के साथ बिताए। इस अवधि में उन्हें वीरनारायण नामक पुत्र रत्न की प्राप्ति भी हुई। 1543 में संग्रामशाह का निधन हो गया। इसके पश्चात् शासन के समस्त सूत्र दलपतशाह को ही सँभालने पड़े जिसमें रानी दुर्गावती उनकी सहयोगी की भूमिका में रहती थीं। इतिहासकारों की मानें तो इस कालखंड में दलपतशाह और रानी दुर्गावती का अधिकांश समय प्रजाहित के कार्यों के साथ-साथ धार्मिक आयोजनों एवं मंदिर निर्माण के कार्यों में व्यतीत होता था। रानी दुर्गावती मदन महल7 के पास शारदा माता मंदिर से लेकर नरसिंहपुर जिले के वरमान घाट शिव मंदिर तक कई मंदिरों से जुड़ी हुई थीं।8 शिक्षा और साहित्य के प्रति रानी का अत्यधिक अनुराग था। रानी के आदेश पर पुत्र वीरनारायण के लिए नियुक्त शिक्षक पंडित हरिदास द्वारा 'प्रस्ताव रत्नाकर' नामक एक विशेष पुस्तक की रचना की गई थी। साहित्य के प्रति रानी दुर्गावती के प्रेम एक प्रमुख उदाहरण इतिहासकार पंडित गणेश दत्त पाठक द्वारा साठ वर्ष पूर्व खोजी गई एक हस्तलिखित पांडुलिपि के एक श्लोक में सामने आता है। श्लोक है–

'दीयतं दिग्गजश्चेत् सकल वसुमति याति पातालमुलम्

वाहश्चेत् सप्तसप्तेह त्रिजगत भिभावेत् अन्धकारस्थमोभिः

स्वर्णदि दीयते चेत कथम्वनितले संचरेयुः सुरेंद्रः

कि दत्वं प्रेयशानियां कविरिति ह्रदये मुंच दुर्गाय विषादम्।'9

निस्संदेह यह श्लोक काव्यात्मक अतिरंजना से युक्त है, किंतु इससे यह अनुमान अवश्य लगाया जा सकता है कि रानी दुर्गावती के दरबार में कवियों व विद्वानों का पूरा सम्मान होता था और उन्हें भरपूर पुरस्कार दिए जाते थे।

रानी दुर्गावती को शिकार का भी बड़ा शौक था। उनके शरीर में राजपूती रक्त था। वे स्वयं एक सिद्ध योद्धा थीं अतः ससुराल में आने के बाद अपने शस्त्र कौशल को आज़माने के लिए वे अक्सर खाली समय में शिकार पर जाया करती थीं। इस विषय में अकबर के दरबारी लेखक अबुल फ़ज़ल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'अकबरनामा' में जो लिखा है उसका हिंदी अनुवाद प्रस्तुत कर रहे, "वह बंदूक और तीर चलाने में बहुत अच्छी थीं।

जब वह सुन लेतीं कि जंगल में कोई बाघ दिखा है, तो वो तब तक पानी नहीं पीती थीं जब तक उसका शिकार न कर लें।10 इस विषय में इतिहास एवं लोक गाथाओं में एक रोचक प्रसंग मिलता है कि "रानी दुर्गावती के पास सरमन नाम का एक हाथी था। एक बार रानी बाघ का शिकार करने सरमन पर सवार होकर जंगल में गईं शिकार के दौरान, जब रानी बाघ का पीछा कर रही थीं, तब अचानक उसने पलटकर उन पर हमला कर दिया जिससे हाथी का पिछला हिस्सा घायल हो गया। सामान्यतः एक घायल हाथी दर्द से अंधा हो जाता है और अनियंत्रित होकर, हर किसी को और हर चीज को रौंदते हुए भागने लगता है। लेकिन सरमन ने ऐसा कुछ नहीं किया और रानी को सुरक्षित उनके स्थान पर ले आया। रानी दुर्गावती

आजीवन सरमन की इस स्वामिभक्ति को नहीं भूलीं और वो उनके लिए पुत्र वीरनारायण जितना ही प्रिय हो गया। इस घटना के बाद से वह शायद ही कभी किसी अन्य हाथी पर सवार हुईं उन्होंने सरमन के सम्मान में हाथीताल टैंक भी बनवाया। जबलपुर के भँवरताल उपवन में आज सरमन पर बैठी रानी दुर्गावती की एक भव्य प्रतिमा देखी जा सकती है।11

उपर्युक्त घटनाक्रम उस समय के हैं, जब रानी दुर्गावती के जीवन में सुख-शांति बनी हुई थी। दलपतशाह के शासन में गढ़ कटंगा सुरक्षित था। प्रजा प्रसन्न थी। किंतु काल की गति का अनुमान कोई कहाँ लगा सका है! विवाह के आठ या नौ12 वर्ष के बाद का समय था, जब रानी के सुखी संसार में दु:ख की काली छाया ने प्रवेश किया। सन् 1550 का साल था, जब राजा दलपतशाह का आकस्मिक निधन हो गया। उन्हें राजा बने मात्र सात वर्ष ही हुए थे और विवाह को दशक भी नहीं हुआ था। यह आघात न केवल रानी अपितु गोंड राज्य के लिए भी असहनीय था। बिना राजा का राज्य शत्रुओं के लिए सहज ही सुलभ लक्ष्य हो जाना था। रानी की अवस्था इस समय 26 वर्ष की थी, वहीं पुत्र वीरनारायण मात्र पाँच वर्ष का था। समझा जा सकता है कि परिस्थिति कितनी भीषण थी।

विवाह के मात्र आठ-नौ वर्षों में अचानक प्राणप्रिय पति को खो देने का शोक कैसा रहा होगा अब तो इसका अनुमान ही लगाया जा सकता है, किंतु तब रानी के पास यह शोक मनाने के लिए कोई अवकाश नहीं था। उन्हें अपने मन को वज्र बनाकर अपने बेटे की विरासत और गढ़ कटंगा के लोगों के भविष्य के बारे में सोचने की ज़रूरत थी, और उन्होंने यह काम उल्लेखनीय संयम और विवेक के साथ किया। उन्होंने सिद्ध किया कि केवल उनका नाम ही 'दुर्गा' नहीं है, उनमें देवी दुर्गा-सी दृढ़ता भी है।

रानी के लिए चुनौती केवल बाहरी शत्रु ही नहीं थे, राज-परिवार के भीतरी कुचक्रों से भी उन्हें निपटना था। दलपतशाह की मृत्यु के पश्चात् उनका छोटा भाई चंद्र शाह भतीजे वीरनारायण का संरक्षक बनकर राजसिंहासन पर अधिकार करने की योजना बनाने लगा, किंतु रानी ने समय रहते इस योजना को भाँप लिया और पूरी राजनीतिक सूझबूझ के साथ अपने दावे को मजबूत करने के लिए अपने मृत पति के दरबार के वरिष्ठ सदस्यों का समर्थन हासिल कर लिया। अाधार कायस्थ, जो दलपति के शासन में प्रधानमंत्री थे, ने न्यायालय में वीरनारायण के गुट का समर्थन किया। साथ ही, उन्हें प्रशासन में एक अन्य वरिष्ठ अधिकारी, मान ब्राण का समर्थन भी प्राप्त था। दरबार के बाकी सदस्यों ने इन प्रभावशाली व्यक्तियों के पक्ष का समर्थन किया और इस प्रकार रानी दुर्गावती को संरक्षिका बनाते हुए वीरनारायण को राजा घोषित कर दिया गया। इस निर्णय ने कुँवर वीरनारायण के अधिकार ही नहीं अपितु संकट में पड़ी गढ़ कटंगा की संप्रभुता को भी सुरक्षित कर दिया था।

रानी का शासन रानी दुर्गावती के हाथ में गढ़ कटंगा का शासन तो आ गया था, किंतु उनके पास शासन के संचालन का कोई अनुभव नहीं था। श्वसुर और पति के शासनकाल में उनकी राजनीतिक सक्रियता बहुत कम थी, किंतु अब वह समझ रही थीं कि उन्हें तत्परतापूर्वक और निर्णायक रूप से कार्य करने की आवश्यकता है। जिन लोगों ने दुर्गावती को न्यायालय में समर्थन दिया था, उनके मन में यह भाव होना

संभव था कि अनुभवहीन रानी शासन के लिए उन्हीं पर निर्भर रहेंगी। किंतु उनकी यह सोच भ्रम मात्र थी। रानी ने समर्थकों को योग्य पद अवश्य प्रदान किए, परंतु शासन की केंद्रीय शक्ति अपने ही पास रखी और निर्णयों के लिए कभी किसी पर निर्भर नहीं हुई।

समय अपनी गति से गतिमान रहा। रानी जिस राज्य की बागडोर सँभाल रही थी वो काफी बड़ा था। इसके अंतर्गत 43 गढ़ या किला रूपी जिले शामिल थे, जिनमें से प्रत्येक में 350 से 700 गाँव तक शामिल थे। ये किलानुमा जिले या तो सीधे रानी द्वारा या फिर उनके अधीनस्थ सामंती जागीरदारों और कनिष्ठ राजाओं के माध्यम से नियंत्रित प्रशासनिक इकाइयाँ थीं। ये कनिष्ठ राजा, वास्तव में कोई स्वतंत्र राजा नहीं थे अपितु रानी के अधीन थे। आवश्यकता पड़ने पर ये राजा अपनी सैन्य टुकड़ियाँ भी रानी की सहायता के लिए भेजते थे।

गढ़ कटंगा जैसे बड़े क्षेत्र का संचालन सहज कार्य नहीं था। किंतु रानी इस दायित्व से विचलित नहीं हुईं। थोड़े ही समय में अपनी सूझबूझ, दृढ़ इच्छाशक्ति और कुशल प्रशासन के बलबूते उन्होंने दलपतशाह के निधन के पश्चात् अनिश्चितता से ग्रस्त हुई गढ़ कटंगा की शासन व्यवस्था को पुनः सुदृढ़ कर दिया। रानी के शासन में गढ़ कटंगा का वर्णन करते हुए कवि केशव दीक्षित ने लिखा है–

उर्वरा सर्वतो भूमिः मध्यतो नर्मदा नदी

विज्ञा दुर्गावती राज्ञी गढ़ा राज्ये त्रायोगुणः। 13

अर्थात् गढ़ा राज्य में हर जगह उपजाऊ कृषि भूमि है, जिसमें नर्मदा नदी बहती है और इस पर विद्वान रानी दुर्गावती का शासन है, जिनका क्षेत्र उपलब्धियों से भरा है। वस्तुतः रानी के शासन में प्रजा का हित केंद्रीय विषय था। प्रजा को किसी प्रकार कष्ट न हो, इसका वे विशेष रूप से ध्यान रखती थीं। इस संदर्भ में रानी की कर-व्यवस्था का उदाहरण उल्लेखनीय है। गोंड लोक-गाथाओं में रानी द्वारा सूखे के समय कर माफ करने का वर्णन मिलता है। यहाँ तक कि ऐसी स्थिति में पशुओं के चारे का प्रबंध भी राजकोष से करने का आदेश रानी ने दे रखा था।14 पड़ोस के राज्यों में रानी की इस कर-व्यवस्था को आदर्श की तरह देखा जाता था। समझना कठिन नहीं है कि गोंड जनजाति आज भी अपनी इस महान रानी और उनके शासन को अत्यंत गर्व के साथ क्यों याद करती है। गढ़ा उन कुछ हिंदू राज्यों में से एक था जो इतना समृद्ध था कि वह सोने और चाँदी के अपने सिक्के ढालता था, जिन पर देवनागरी या तेलुगू में किंवदंतियाँ अंकित होती थीं। रामनगर शिलालेख में इस तथ्य का उल्लेख मिलता है। रानी के राज्य, धन-वैभव और शासन की जानकारी देने वाले रामनगर शिलालेख में सोने के सिक्कों का भी उल्लेख मिलता है।15

वस्तुतः संग्रामशाह और दलपतशाह के शासन में गढ़ा राज्य की शक्ति और समृद्धि का विस्तार हुआ था, जिसे रानी दुर्गावती ने भी अपने शासन के दौरान कुशलतापूर्वक आगे बढ़ाने का कार्य किया। दलपतशाह की मृत्यु के पश्चात् जिन लोगों ने गढ़ा के कमजोर पड़ जाने की उम्मीद कि थी उनके मंसूबों को ध्वस्त करते हुए गढ़ा रानी की छत्रछाया में मज़बूती से खड़ा था।

आक्रमण और संघर्ष

एक स्त्री के शासन में गढ़ा की बढ़ती शक्ति और समृद्धि सीमावर्ती राज्यों को बेचैन कर रही थीं। गढ़ा के भू-राजनीतिक परिदृश्य से पता चलता है कि दुर्गावती का राज्य घात लगाकर बैठे गीदड़ों से घिरा हुआ था। लेकिन जब तक मुगल सत्ता ने गढ़ा में रुचि नहीं ली तब तक वे शक्ति और कूटनीति के बल पर अपने पड़ोसियों को नियंत्रित रखने में सफल रहीं। लेकिन इस बीच सब शांत रहा हो, ऐसा भी नहीं है। सन् 1556 में मालवा की गद्दी पर बैठे बाज़ बहादुर ने गढ़ा पर धावा बोल दिया। यह रानी के लिए एक बड़ी चुनौती थी। युद्ध का यह उनका प्रथम अनुभव था। लेकिन उन्होंने शत्रु के बलाबल की थाह लेते हुए चतुराई से बाज़ बहादुर को एक पहाड़ी दर्रे पर घात लगाकर हमला करने का लालच दिया। बाज़ बहादुर की सेना लालच में पड़कर उस दर्रे में जाकर फँस गई। उस सेना में तोपें नहीं थीं कि अपने स्थान से दूर तक हमला कर सकें। लेकिन गोंडों के पास कुशल तीरंदाज़ों की पूरी सेना थी, जिसे रानी ने पहले से ही योजनानुसार निश्चित स्थान पर तैनात करवा दिया था। फिर क्या था, क्षेत्र की जटिलताओं से भलीभाँति परिचित गोंडों के तीरंदाज़ व पैदल सेना ने पूरी शक्ति से आक्रमण किया और देखते-ही-देखते बाज़ बहादुर की सेना को तहस-नहस कर दिया। स्त्री-शासक के प्रति विजय का अति-आत्मविश्वास बाज़ बहादुर को ले डूबा और पराजित अवस्था में उसे पलायन करना पड़ा। इस विजय से रानी को राज्य विस्तार का लाभ तो नहीं मिला, परंतु उनका यश चारों तरफ फैल गया। उन्होंने इस जीत के बाद मदन महल के पास स्थित शारदा माता मंदिर में मनोकामना पूरी करने वाली पताका लगाने की परंपरा शुरू की जो कि आज भी जारी है।16

स्थानीय लोक-गाथाओं का दावा है कि रानी दुर्गावती ने इक्यावन लड़ाइयों का सामना किया और अजेय रहीं। इस बात में कितनी सत्यता है, इसका कोई पुख्ता ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है। परंतु गढ़ा राज्य अपनी समृद्धि के कारण पड़ोसी राज्यों के लिए आँख का काँटा बना हुआ था, अतः इस बात की पूरी संभावना है कि अपने शासनकाल के दौरान रानी को मुग़ल सेना से टकराव के अतिरिक्त भी छोटी-बड़ी अनेक लड़ाइयों का सामना करना पड़ा होगा।

रानी के नेतृत्व में गढ़ा की बढ़ती शक्ति और समृद्धि अब मुगल शासन का ध्यान आकर्षित करने लगी थी। अकबर अब इस विषय में स्वयं रुचि लेने लगा था। गढ़ा में अकबर की रुचि ने रानी के प्रति ईर्ष्या-भाव रखने वाले पड़ोसी शासकों को उत्साहित किया। रानी इस बात को समझती थीं; और वे गढ़ा को अनावश्यक संघर्ष से बचाए रखना चाहती थीं। इसी सोच के तहत उन्होंने मुग़ल दरबार से अच्छे संबंध रखने का प्रयास किया।17 उन्होंने दरबार में आए मुग़ल अधिकारियों को उपहार देने से लेकर अपने सबसे काबिल मंत्री आधार कायस्थ को मुगल दरबार में भेजने तक संघर्ष की स्थिति न आने देने के लिए कई प्रयास किए। किंतु रानी के ये प्रयास तो तब न कारगर होते जब दूसरा पक्ष भी शांति के लिए तैयार होता। अकबर की तो मंशा ही यही थी कि किसी भी बहाने से गढ़ा राज्य से संघर्ष की स्थिति उत्पन्न की जाए जिससे कि वो विशाल मुगल सेना भेजकर इस अपेक्षाकृत कमजोर राज्य को भी अपने अधीन कर ले। यह

मुगल बादशाह की वो साम्राज्यवादी भूख थी जिसका अनावश्यक रक्तपात के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु से शांत होना संभव नहीं था।

रानी द्वारा संघर्ष टालने के सभी प्रयासों के बावजूद साम्राज्यवादी भूख से विक्षिप्त बादशाह अकबर ने मुग़ल सेनापति आसफ़ खाँ को गढ़ा विजय के लिए आदेश दे दिया। रामनगर शिलालेख में आसफ़ खाँ के इस सैन्य अभियान को कर-संग्रहण का अभियान लिखा गया है।18 समझना कठिन नहीं है कि मुगल शासन द्वारा अपने इस अनुचित आक्रमण को उचित ठहराने के लिए कर-संग्रह का बहाना गढ़ा गया था। लेकिन स्त्री-शासित राज्य को हल्के में लेने की जो गलती बाज़ बहादुर ने की थी वही गलती आसफ़ खाँ से भी हुई। आसफ़ खाँ को उम्मीद थी कि उसके आक्रमण की सूचना से घबड़ाकर रानी बिना अधिक संघर्ष के ही पराजय स्वीकार कर लेंगी। परंतु दुर्गा के साहस को आँकने में वो चूक कर रहा था। उसने इस क्षेत्र में कई युद्ध जीते थे जिससे उसकी सेना का मनोबल मजबूत था। संख्याबल, संगठन और संसाधन तीनों ही मामलों में गढ़ा की सेना मुगल सैन्य-शक्ति के समक्ष कमजोर थी; किंतु इससे रानी के साहस में कोई कमी नहीं आई। तमाम प्रतिकूलताओं के बावजूद वे द्वार पर खड़े शत्रु को प्रत्युत्तर देने का मन बना चुकी थीं। यही कारण था कि जब उनके विश्वसनीय मंत्री आधार कायस्थ ने उन्हें पीछे हटकर अपनी सैन्य शक्ति बढ़ाने का सुझाव दिया तो वे क्रोधित हो गईं। वस्तुतः रानी दुर्गावती अपने कर्तव्य को लेकर स्पष्ट थीं कि अपमान के साथ जीने की तुलना में गौरव के साथ मरना बेहतर है।19

रानी ने युद्ध से पीछे हटने के तमाम दबावों के बावजूद सैन्य संगठन का कार्य जारी रखा। फिर अपने मंत्रियों से विचार-विमर्श के उपरांत यह निर्णय लिया कि आसफ़ खाँ को भ्रम में डाला जाए और सही स्थान एवं अवसर देखकर उस पर हमला किया जाए। इसके लिए रानी ने अपने पलायन का नाटक रच दिया। वे दमोह जहाँ आसफ़ खाँ की सेना जमी हुई थी, के लिए निकलीं लेकिन बीच में ही कहीं जंगलों में गुम हो गईं। आसफ़ खाँ रानी के आने की प्रतीक्षा करता रहा लेकिन जब रानी नहीं पहुँचीं तो उसे आभास हो गया कि उसे भ्रम में डाला गया है। आसफ़ खाँ रानी के सुरक्षित भाग जाने की सूचना से नाराज था। उसने तय किया कि वो इसका प्रतिशोध उनकी प्रजा से लेगा। इधर रानी दुर्गावती अपने साथ और अधिक सैनिकों को शामिल करते हुए आगे बढ़ रही थीं। आखिरकार उन्हें एक आदर्श स्थान मिला जहाँ उनकी बहुत छोटी सेना मुग़ल सेना से मुकाबला कर सकती थी। जबलपुर से लगभग 19-20 किमी. दूर स्थित नाराई नाला क्षेत्र वह स्थान था। यह प्रवेश करने और फिर बाहर निकलने के लिए बहुत संकीर्ण स्थान था। गोंड अपने इलाके को जानते थे और उन्होंने अपना युद्ध-स्थल अच्छी तरह से चुना था। उनकी योजना थी कि आसफ़ खाँ की विशाल सेना जैसे ही इस संकीर्ण दर्रे में प्रवेश करती, वो गोंडों की धनुर्धर वाहिनी और हाथी वाहिनी का सहज शिकार बन जाती। जब तक आसफ खाँ को रानी के ठिकाने की खबर मिली, तब तक रानी और उनकी सेना पहले से ही नरई नाला में तैनात हो चुकी थी। खान ने वही किया जिसकी गोंड उम्मीद कर रहे थे, उसने अपनी सेना को विभाजित कर दिया। इसी बीच बरसात शुरू हो गई जो ऊबड़-खाबड़ दर्रों वाले नाला क्षेत्र को अगम्य बना रही थी। अबुल फ़ज़ल के अनुसार, रानी ने अपने सैनिकों को स्पष्ट निर्देश दे रखा था कि “जल्दी मत करो, दुश्मन को दर्रों में घुसने दो और फिर हम चारों तरफ से

उन पर टूट पड़ेंगे और उन्हें खदेड़ देंगे।"20 आखिर युद्ध छिड़ा और अत्यंत विनाशकारी युद्ध हुआ। गोंडों ने भी अपनी सेना खोई लेकिन आसफ़ खाँ को अधिक सैन्य क्षति उठानी पड़ी। गोंडों को क्षेत्र का लाभ मिला और संध्या तक स्पष्ट हो गया था कि रानी विजयी रही हैं। अकबरनामा के अनुसार, "रानी ने भगोड़ों का पीछा किया और मुगलों को उनके शिविर में वापस धकेलते हुए खड्ड से बाहर निकलीं।" फैसला स्पष्ट था : युद्ध के पहले दिन, 'रानी विजयी हुई' थीं।21 अपनी सूझबूझ, नीतिकुशलता और सैन्य-पराक्रम से यह युद्ध रानी ने जीत लिया था, लेकिन उन्हें ज्ञात था कि अगले दिन पुनः युद्ध होने वाला है जिसमें उनके लिए अब भी सबसे बड़ी चुनौती मुग़ल तोपों से निपटना ही था।

अगले दिन के युद्ध में मुगल तोपें रात्रि में ही तैनात कर दी गई थीं लेकिन गोंड सेना का हौसला अब भी कमजोर नहीं था। रानी स्वयं अपने प्रिय हाथी सरमन पर सवार थीं। फिर युद्ध आरंभ हुआ। दोनों तरफ से तीरों की बारिश के साथ-साथ मुग़ल सेना के तोपों की गोलाबारी भी हो रही थी, लेकिन जल्द ही हाथापाई की नौबत आ गई। अबुल फज़ल ने लिखा है, "सेनाओं के मुठभेड़ के बाद, काम तीरों और बंदूकों से खंजर और तलवारों तक चला गया।" दूसरे दिन की लड़ाई भी गोंडों के पक्ष में रही। अपनी तोपों के बावजूद आसफ़ खाँ रानी की सेना को भेद नहीं पाया। इसमें प्रमुख कारण रानी के पुत्र वीरनारायण का अद्भुत पराक्रम रहा, जिसकी प्रशंसा अबुल फज़ल ने भी की है।22

तीसरे दिन के टकराव में भी वीरनारायण का पराक्रम जारी रही। परंतु मुग़ल सेना से जूझते हुए एक क्षण ऐसा आया जब वे बुरी तरह से घायल होकर गिर पड़े। रानी ने अपने विश्वसनीय सैनिकों को आदेश दिया कि उन्हें युद्धभूमि से हटाकर किसी सुरक्षित स्थान पर ले जाएँ, जिससे स्वस्थ होकर वे पुनः युद्ध में सम्मिलित हो सकें। सैनिकों ने ऐसा ही किया। यह वीरनारायण की सुरक्षा के लिए उठाया गया कदम था, परंतु इसका प्रभाव उल्टा पड़ा। वीरनारायण के होने से सेना का मनोबल मज़बूत था। जब सैनिकों ने उन्हें युद्धभूमि से उठाकर ले जाते देखा तो उनकी हिम्मत टूटने लगी।

रानी के साथ 300 के करीब ही सेना शेष रह गई थी। लेकिन फिर भी रानी के संकल्प में कोई कमी नहीं आई और उन्होंने अपने वीर अनुयायियों के साथ अपना युद्ध जारी रखा।23 इस समय तक कई शीर्ष गोंड सेनापति पहले ही वीरगति को प्राप्त हो चुके थे। अब नाराई नाला के इस युद्ध की वो निर्णायक घड़ी आ चुकी थी जिसका चित्र आज भी इतिहास की शौर्य गाथाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। रानी पूरी हिम्मत के साथ हाथी पर बैठकर मारकाट मचाते हुए अपनी शेष सेना को लेकर मुग़लों को खदेड़ने के लिए बढ़ी जा रही थीं। युद्ध अत्यंत क्रूर और कमजोर हृदय वालों के लिए घातक रूप ले चुका था। इसी बीच अचानक कहीं से एक तीर आकर रानी के कंधे में धँस गया। उन्होंने उसे निकाल कर फेंक दिया और युद्ध करती रहीं। तभी एक और तीर उनकी गरदन में आकर लगा। रानी ने उसे भी निकाल फेंका। मगर इन घावों की पीड़ा और रक्तस्राव के कारण थोड़ी ही देर में वे मूर्च्छित होकर हाथी पर लगे आसन पर गिर पड़ीं। रानी को गिरते देख सेना का मनोबल भी जाता रहा और सैनिक उन्हें मृत समझकर पलायन करने लगे। रानी समझ गईं कि अब यह युद्ध हाथ से जा चुका है। स्थिति यह थी कि वह पीछे नहीं हट सकती थीं, लेकिन दुश्मन द्वारा पकड़े जाने और अपमानित होना भी उन्हें स्वीकार नहीं था। अबुल फज़ल

ने अकबरनामा में लिखा है कि “इस पूरे अभियान में दुर्गावती का आदर्श वाक्य था, अपमान से बेहतर है मृत्यु।”

रानी अपने हाथी पर अकेली और बेहोश थीं। उनके साथ उनका विश्वसनीय सेवक आधार (प्रधानमंत्री आधार कायस्थ से भिन्न) था। रानी ने उनसे कहा, “मैंने हमेशा तुमको शिक्षित करने और तुम पर विश्वास करने का काम किया है। आज का दिन वह दिन है जब मैं युद्ध में पराजित हो गई हूँ। परंतु ईश्वर न करें कि मैं शत्रु के हाथों में पड़कर नाम और सम्मान भी गँवा दूँ, अतः तुम एक वफादार सेवक की तरह काम करो और इस तेज़ खंजर से मुझे खत्म कर दो।24 आधार इसके लिए राजी नहीं हुआ और रानी को वहाँ से बचाकर ले जाने का आश्वासन देने लगा। परंतु रानी जानती थीं कि अब वहाँ से बचकर निकलना संभव नहीं था। ऐसा करने पर शत्रु के चंगुल में फँसने की पूरी संभावना थी। अतः आधार की बात सुनकर वे क्रोधित हो गईं और बोलीं, “क्या तुम मुझे अपमान में डालना चाहते हो?" परंतु आधार किसी भी स्थिति में रानी की बात मानने को राजी नहीं हुआ। रानी समझ गई कि किसी भी हाल में उनका वफादार सेवक उन्हें नहीं मार सकता, तो वह पीछे मुड़ीं और अचानक हाथी चालक की कमर से एक खंजर छीनकर घोंप लिया। आसफ़ खाँ युद्ध जीत गया, लेकिन जीते-जी रानी को नहीं पकड़ सका। यह महान वीरांगना रानी इतिहास में अपने तेज की अमित आभा बिखेरकर वीरों के लोक को प्रस्थान कर गई। इस युद्ध के वर्णनों पर आधारित केशव और जगन्नाथ का एक प्रसिद्ध चित्र आज भी विक्टोरिया एंड अल्वर्ट संग्रहालय, लंदन में रखा हुआ है। यह चित्र देखते हुए हम रानी के शौर्य, साहस और बलिदान का प्रत्यक्ष अनुभव कर सकते हैं।

मुगल सैन्य-शक्ति और गढ़ा के बीच युद्ध पूर्णतः विषम शक्तियों का युद्ध था। इसमें किसी हाल में गढ़ा की पूर्ण विजय संभव नहीं थी। रानी चाहतीं तो मुग़लों से संधि कर बड़ी सहजता से उनकी छत्रछाया में शासन चला सकती थीं। किंतु अपनी मातृभूमि की प्रतिष्ठा के लिए उन्होंने जो संघर्ष किया और अंत में बलिदान दिया वो ही उन्हें इतिहास का एक अमर चरित्र बनाता है। प्रजा के हितों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता हो या धार्मिक कार्यों में उनकी गहरी अभिरुचि हो अथवा युद्ध के अवसर पर अपने लोगों की रक्षा हेतु दृढ़ता से खड़े रहना हो, यही वो विशेषताएँ हैं जो आज गोंड समाज में उन्हें रानी से बढ़कर एक 'देवी' के रूप में प्रतिष्ठित किए हैं। नाराई नाला स्थित रानी के समाधि-स्थल पर आज भी हर वर्ष 24 जून को बलिदान दिवस के रूप में मनाया जाता है। यहाँ तक कि कोविड काल में भी यह आयोजन नहीं रुका।25

रानी दुर्गावती की वंदना करने वाले कई गोंड गीत रानी और उनके दिव्य नाम (दुर्गा) के बीच बहुत कम अंतर करते हैं। आज गोंडों के लिए उनकी रानी देवी का अवतार बन चुकी हैं। यह गोंड लोकगीत देखिए और महारानी दुर्गावती के शौर्य की महागाथा में मग्न हो जाइए–

तारी नाना, मोर नाना, रे नाना

रानी दुर्गावती जो आये।

माता दुर्गा जो आये।

रण माँ जूझे धारे तलवार।

रानी दुर्गा कहाये।

राजा दलपत कुंजी रानी हो,

रण चंडी कहाये।

डगर डगर मा डोलों हो,

गढ़ मंडला बचाये। 26

संदर्भ सूची

1. Sengupta, Nandini. Rani Durgawati: The Forgotten Life of a Warrior Queen (p. 9). Penguin Random House

2. रानी दुर्गावती के पिता के रूप में राजा कीर्ति सिंह चंदेल और राजा शालिवाहन दोनों के ही नाम इतिहास की पुस्तकों में मिलते हैं। स्पष्टता न होने के कारण ही यहाँ दोनों नाम दिए गए हैं।

3. Sengupta, Nandini. Rani Durgawati: The Forgotten Life of a Warrior Queen (p. 55-56). Penguin Random House India Private Limited, Kindle Edition.

4. Journal of The Asiatic Society of Bengal, August, 1837, Sir W. H. Sleeman. History of the Gurha Mundala Rajas, p-627

5. Sengupta, Nandini. Rani Durgawati: The Forgotten Life of a Warrior Queen (p. 57). Penguin Random House India Private Limited. Kindle Edition.

6. पूर्वोक्त, पृ. 57-58

7. https://asijabalpur.gov.in/monuments-detail/madan-mahal-on-the-top-of-the- hill-upon-a-large-boulder-rock-54/index.html

8. Sengupta, Nandini. Rani Durgawati: The Forgotten Life of a Warrior Queen (p. 71). Penguin Random House India Private Limited. Kindle Edition.

9. पूर्वोक्त

10. Abul Fazal, The Akbarnama, Vol II, Page 327. Translated from Persian by H. Beveridge, The Asiatic Society

11. https://www.google.com.pk/travel/hotels/entity/Chk1x9In_JuX58]OGg0vZ y8xMWp2MWRwaHdwEAQ?utm_campaign-sharing & utm_medium= link&utm_source-

htls&ved=0CAAQ5JsGaheKEwiosk_1726FAXUA
AAAAHQAAAAAQBA&ts=CAEaBAoCGgAqBAoAGRA

12. रानी दुर्गावती के विवाह को लेकर 1541 और 1542 के बीच इतिहास में भ्रम की स्थिति है अतः इस आलेख में हम दोनों ही तारीखों को मानकर चले हैं।

13. Sengupta, Nandini. Rani Durgawati: The Forgotten Life of a Warrior Queen (p. 97). Penguin Random House India Private Limited. Kindle Edition.

14. पूर्वोक्त

15. पूर्वोक्त, पृ. 103

16. https://www.bhaskarhindi.com/city/news/sharda-devi-temple-madan-mahal- the-tradition-of-offering-the-flag-started-after-defeating- the-mughal- emperor-302480

17. Sengupta, Nandini. Rani Durgawati: The Forgotten Life of a Warrior Queen (p. 119). Penguin Random House India Private Limited. Kindle Edition.

18. Sengupta, Nandini. Rani Durgawati: The Forgotten Life of a Warrior Queen (p. 143). Penguin Random House India Private Limited. Kindle Edition.

19. पूर्वोक्त, पृ. 145

20. Abul Fazal, The Akbarnama, Vol-II, Page 329, Translated frorn Persian by H. Beveridge, The Asiatic Society

21. पूर्वोक्त

22. पूर्वोक्त

23. पूर्वोक्त, पृ. 330

24. पूर्वोक्त

25. Sengupta, Nandini. Rani Durgawati: The Forgotten Life of a Warrior Queen (p. 11), Penguin Random House India Private Limited, Kindle Edition.

26. पूर्वोक्त, पृ. 13

पीयूष कमार दूबे

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग कॉलेज ऑफ वोकेशनल स्टडीज़

दिल्ली विश्वविद्यालय